अतीत की ओर...

प्रमिला

माँ से मातृभाषा तक...

वर्ष : 02 , अंक : 11, दिसंबर – जनवरी 2025

मूल्य : 20 रुपए | पृष्ठ : 4

ई – पत्रिका उपलब्ध है : www.rachnakosh.in

जेकर अँतड़ी झुराइल होखे
ओकरा सांझ का बिहान का।
जे चार दिन से ना सुतल होखे
ओकरा खेत का खरिहान का ।।

- ज्ञानेश्वर 'गुंजन'

धोबिन की रगड़, नाईन की बतकही — मिट्टी की वो आवाजें, जो अब नहीं सुनाई देतीं

आकांक्षा राज

"कुछ लोग हमारे जीवन में आते नहीं, बल्कि वो होते ही हैं - चुपचाप, स्थिर, अपने काम में रमे। और जब वो चले जाते हैं, तो लगता है जैसे जीवन की नींव ही हिल गई हो।" जब भी मैं अपने गाँव की ओर लौटती हूँ, तो सब कुछ वैसा ही दिखता है — पोखर, पीपल, खेत, खलिहान, मंदिर की घंटियाँ, धूप में सिकती गोबर के उपले, और आँगन में बिछी खटिया। लेकिन फिर अचानक लगता है - कुछ तो था जो अब नहीं है। कोई आहट नहीं, कोई पुकार नहीं। जैसे एक पूरी की पूरी पीढ़ी समय की लहरों में डूब गई हो। बेलिन, नाईन, धोबिन, गोंड़, बंसो - ये बस नाम नहीं हैं, एक ज़माने की साँसें हैं। वे लोग जिनका नाम कभी स्कूल की किताबों में नहीं आया, जिन्हें इतिहास की घटनाओं में कोई जगह नहीं मिली - पर गाँव की हर गली में उनकी छाप थी। उनकी मौजूदगी से गांव में एक रौनक थी।

बेलिन – दर्द से जीवन को जन्म देती देवी

गाँव में जब रात के तीसरे पहर कोई स्त्री प्रसव वेदना से कराहती थी, तब अस्पताल दूर था, एंबुलेंस नहीं था, मोबाइल नेटवर्क तक नहीं। लेकिन एक आवाज़ थी – "बेलिन अम्मा, जल्दी आईं..." बेलिन आती थी – सिर पर गमछा, एक पुरानी थाली में तेल, गुनगुना पानी, और आँखों में एक अनकहा विश्वास लेकर। उसने नब्ज़ नहीं देखी, पर माँ की आँखों से पढ़ लिया कि अब वक़्त है। वो बार-बार कहती – "हिम्मत रख बहिनिया, भगवान सहारा देंगे। तू जइबू नइखे अकेली।" उसके कांपते हाथों ने सैकड़ों जीवन को छुआ, मगर किसी ने उसका नाम तक नहीं लिखा। आज बेलिन एक कोने में बैठी है – वो पूछती नहीं, क्योंकि पूछने की आदत उसे कभी थी ही नहीं।

नाईन – जो हँसी में दर्द छुपा लेती थी

नाईन हर घर की कहानियों की गवाह थी। वो बाल काटती थी, औरतों के नाखून काटती, पैर में आलता लगाती और साथ में ढेर सारी बतकही भी करती थी। हर रिश्ते की डोर में कहीं उसकी सलाह बंधी होती थी। शादी-ब्याह में सिन्दूरदान की रस्म हो या हल्दी की, उसकी बिन बुलाए मौजूदगी भी सबसे ज़रूरी होती थी। वह बिना पढ़े लिखे परंपरा की जीवित किताब थी। गाँव में जब भी कोई बड़ा अवसर आता, उसकी चहलकदमी तेज़ हो जाती। उसके पास समय नहीं होता, पर हर घर का समय उसी से तय होता था। अब वो नहीं आती। रस्में कैमरे में बंद हो गई हैं, लेकिन नाईन की मुस्कान कहीं तस्वीरों में नहीं होती। आज जब शहरी सैलून और हेयर स्टाइलिस्ट आ गए हैं, नाईन गायब हो गई है। उसकी बेटी अब 'ब्यूटी पार्लर' चला रही है, लेकिन अपनी माँ की कहानी सुनाते हुए उसकी आँखें कहीं और देखती हैं - जैसे वो किसी भूले हुए समय को तलाश रही हो।

धोबिन – कपड़ों की रगड़ में सजे जीवन के गीत

धोबिन का नाम आते ही पोखर की सीढ़ियाँ, पानी में गिरती साड़ी, और उसके स्वर की लहरें याद आती हैं। "धोती धोती मइया, सपना में सइयाँ..." उसके गीत, उसकी रगड़, और उसके बोल - कपड़े से ज़्यादा मन के मैल धोते थे। उसके हाथों से निकलकर कपड़े सिर्फ साफ नहीं होते थे, उनमें एक सादगी की ख़ुशबू भी होती थी - मिट्टी, साबुन और स्वाभिमान की। आज कपड़े वाशिंग मशीन में जाते हैं, और रिश्ते ड्राय क्लीनिंग में। धोबिन ? अब वो किसी कॉलोनी में बाथरूम साफ करती है, और पहचान से ज्यादा तनख्वाह के लिए जीती है।

बंसो – बाँस का जादूगर

बंसो के हाथों में बाँस मोम बन जाता था। उससे सूप बनाना, चरखी बनाना, बांसुरी तराशना - ये सब उसकी आत्मा के विस्तार थे। उसने बाँस को कभी सिर्फ वस्तु नहीं समझा - वह उसके लिए जीवन का माध्यम था। बंसो सिर्फ बाँस काटता नहीं था - वो बाँस को सांस देता था। सूप, डलिया, पंखा, चरखी, बाँसुरी - उसके हाथों में बाँस शिल्प नहीं, संस्कृति बन जाता था। गाँव की हर शादी, हर उत्सव में बंसो की बनाई चीज़ें होती थीं। पहले के शादी विवाह में सूप, डलिया का एक अलग ही महत्व हुआ करता था। जब बंसो सूप और डलिया लेकर आता तो उसे बहुत ही उत्साह के साथ परिछ के लिया जाता था। ये एक शगुन हुआ करता था। उसकी बांसुरी की तानें पोखर तक गूंजती थीं। अब बंसो नहीं है। प्लास्टिक और मशीनी सामान ने उसे मिटा दिया। उसका बेटा ऐप डाउनलोड करके "ई-कॉमर्स डिलीवरी" करता है, लेकिन पिता की बाँसुरी पर कभी उँगली नहीं चलाई। आज बाँस का काम "हथकरघा उद्योग" बन गया है। लेकिन वो रचनात्मकता, वो आत्मीयता - मशीनों से नहीं आती।

गोंड़ – ज़मीन से जुड़ी आत्मा

गोंड़ समुदाय बिहार की आत्मा के सबसे पुराने हिस्सों में से है। खेत जोतना, बैल चलाना, और मिट्टी से रिश्ता बनाना उनके खून में था। गोंड़ कभी खेत का "सेना" हुआ करते थे - जिनकी मेहनत से हरियाली आती थी। वे खेती को कर्म मानते थे, पेशा नहीं। लेकिन हरित क्रांति और मशीनों की दौड़ ने उन्हें हाशिए पर ढकेल दिया। अब वे मज़दूर हैं - अपने ही खेत से बेगाने। उनका बेटा शहर में ईंट ढोता है, और पिता की माटी वाली विरासत को इतिहास मान चुका है।

गुम हो गए, पर गए नहीं हैं...

सवाल यही है: क्या ये लोग सिर्फ गुज़रे ज़माने की परछाई हैं, या अब भी हमारी स्मृति में साँस लेते हैं? हमने तरक्की की है, लेकिन क्या हमने उन्हें पीछे छोड़ दिया जो इस तरक्की की नींव थे? क्या कोई गाँव अपनी आत्मा को छोड़कर ज़िंदा रह सकता है ? ये किरदार शायद अब गाँव में नहीं दिखते, लेकिन मिट्टी में आज भी उनकी गंध है। हमें ज़रूरत है उस गंध को पहचानने की, उनकी कहानियों को फिर से कहने की। उनके नामों को जातियों की बेड़ियों से आज़ाद कर, इंसानों की तरह याद करने की। याद कीजिए... गाँव उन्हीं से बना था। कुछ लोग किताबों में नहीं होते, पर ज़िंदगी की हर पंक्ति में बसते हैं। "जिस दिन हम बेलिन, धोबिन, गोंड़, बंसो और नाईन को उनकी गरिमा के साथ याद करने लगेंगे, उसी दिन गाँव सिर्फ भूगोल नहीं रहेगा - वो फिर से संस्कृति बन जाएगा।"

अतीत की ओर...

इतिहास के पन्नों में...

1863: लंदन में विश्व की पहली भूमिगत रेल सेवा शुरू हुई.

1933: ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित पंजाबी साहित्यकार गुरदयाल सिंह का जन्म हुआ था.

सावधान ! बारात पहुंचने ही वाली है !

रितेश आदर्श

शा

दियों का सीजन है। यूं तो पूरे भारत की आबादी युवा आबादी मानी जाती है, पर बिहार में युवा कितने हैं और कितने दिन के मेहमान हैं, कहना मुश्किल होता है। बिहार में भी लगन का सीजन पीक पर है। शादी दो परिवारों का मिलन होता है। दो परिवारों के रिश्ते नाते इस मिलन को लेकर खासे परेशान रहते हैं। अमूमन भारत के अन्य राज्यों में दो परिवार शादियों को लेकर चिंतित या उत्साहित होते हैं। बिहार के लोगों की चिंता शादियों का शुभ मुहूर्त, पंडाल और केटरिंग की बुकिंग से कहीं आगे की है। यह चिंता रिश्तेदारों के शादी ब्याह के मौके पर नहीं पहुंच पाने की है। बिहार की चिंता और बड़ी तब हो जाती है जब दूल्हा या दुल्हन खुद परदेसी हों। कई बार रिश्तेदारों से ज्यादा चिंता इन दोनों के न पहुंच पाने की भी होती है। टिकट की मारामारी से ट्रांसपोर्ट की सुविधाओं का मटियामेट हो ही जाता है। देखने में समस्या कितनी छोटी लगती है न! मगर इसके असर इतने व्यापक हैं कि बिहार के सामाजिक आयाम पर भी इसका गहरा प्रभाव देखा जा सकता है।

सबसे पहली चिंता किसी बिहारी परिवार की दूल्हा का ठिकाना और नौकरी की जगह है। बिहार में शादियों की वरीयता के तीन क्रम हैं:

- सरकारी नौकरी
- प्राइवेट नौकरी बिहार से बाहर
- प्राइवेट नौकरी बिहार मे

इस फिक्सिंग के तुरंत बाद आने वाली चिंता रिश्तेदारों का जुटान है। बिहार में सरकारी नौकरी वाली श्रेणी में आने वाले लोगों के रिश्तेदार पहुंचने की संभावना अधिक होती है। इनकी शादियों में अक्सर लाई डिटेक्टर मशीनें लगवानी बेहद जरूरी होती हैं क्योंकि कई बार ऐसे ऐसे लोग ऐसे ऐसे रिश्ते निकाल के पहुंच जाते हैं जिन्हें पहचान पाना डी एन ए एक्सपर्ट, या खुद ईश्वर के बस की भी बात नहीं होती है। ऐसे युवाओं की शादी रमणीक होती है। चमचमाती गाड़ियां और बिना गर्दन वाले, (गहनों से ओवरलोडेड) दूल्हा- दुल्हन मजबूत दहेज सिस्टम की टाइटेनियम शील्ड के तले जब शादी जमाते हैं तो लोग मिसालें देते हैं। बिहार कुछ देर के लिए ही सही संपन्नता की चादर ओढ़े उत्तर प्रदेश के अलावा बाकी सभी राज्यों को दांत निपोर कर चिढ़ाता है।

'बाबूजी केतनो खर्चा करिए, कोई मतलब नहीं', रिश्तेदार चार कमी तो...

बिहार कुछ देर के लिए ही सही संपन्नता की चादर ओढ़े उत्तर प्रदेश के अलावा बाकी सभी राज्यों को दांत निपोर कर चिढ़ाता है। स्थिति अगली दो कैटेगरी के पक्ष में उतनी जाती मालूम नहीं पड़ती है। इनका दहेज, रिश्तेदार, गांव समाज और नौकरी कोई इनके पक्ष में नहीं जाते हैं। इनके तो केटरिंग वाले भी इनको देख कर हंसते है और कहते हैं, 'बाबूजी केतनो खर्चा करिए, कोई मतलब नहीं'। आप और हम अपना खून पसीना ही एक क्यों न कर दें, आपके रिश्तेदार चार कमी तो निकाल के ही जाएंगे। मसलन इनके शादियों में लगवाए गए गुलाबजामुन में जामुन और चाय में दूध की बजाय नमक होने की शिकायत

Photo Credit : Al Jazeera

अक्सर आती है। ऐसे लोग न तो बिहारी हो पा रहे हैं और न ही ढंग के ऑर्गनाइजर। इनके दहेज में मिलने वाली रकम या दुल्हन के बने हुए गहने तक संदेह के घेरे में रहते हैं। रिश्तेदारों के अंदर उफान मारते जेम्स बॉन्ड इस बात की शिनाख्त करने से नहीं चूकते कि पर्दे के पीछे का काला सच क्या है। ईडी और इनकम टैक्स जैसी संस्थाओं के संविधान इन्हीं रिश्तेदारों के बहुमूल्य और अथक प्रयासों का मूर्त रूप रहा है।

इन सारी गिरगिट्या हरकतों के बीच बिहार का गिरमिटिया समाज एक होकर बिहार से आते और जाते युवाओं की शादियों का गवाह बनता रहा है। बहरहाल आना जाना तो लगा ही रहेगा। रिश्तेदार और रिश्वतदारों के बीच फंसा बिहार का युवा शादी और बीवी बच्चों की मार सहने जितना मजबूत बना रहे। ऐसी शुभकामनाएं। वेलकम टू जेन जी! अब वफादारी किसी चौराहे पर बिकने वाले दिहाड़ी मजदूरों जितनी सुलभ नहीं रही! मजदूर और मजदूरी संपन्न राज्य यूंही आबाद रहे!

रेखाचित्र : भाग 8

आर्टिस्ट का नाम : पंकज कुमार
(प्रभुनाथ नगर, छपरा)

आर्टिस्ट का नाम : रश्मि तिवारी
(न्यू हाउसिंग कॉलोनी, छपरा)

अतीत की ओर...

इतिहास के पन्नों में...

1894: कवि एवं लेखक पी. लक्ष्मीकांतम का जन्म हुआ था.

2006: 10 जनवरी को प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने विश्व हिंदी दिवस के रूप में मनाए जाने की घोषणा की थी.

संत कवि लक्ष्मी सखी : एक परिचय

प्रो. (डॉ.) अमर नाथ प्रसाद
विभागाध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, जगदम कॉलेज, छपरा, बिहार

अ

अंक 10 से आगे...

संत कवि लक्ष्मी सखी द्वारा रचित अमर सीढ़ी का दूसरा महत्वपूर्ण राग चतुरमासा है जो चार महीने , आषाढ़ , सावन , भादो और कुवार में ग्रामीण क्षेत्रों में गाया जाता है। यह सारी कविताएं बहुत ही मधुर और साथ ही साथ दार्शनिक और अध्यात्मिक है। इन कविताओं में कवि ने बहुत अच्छे उपमा का प्रयोग किया है।

' चतुर मासा ' का एक पद :

अब लागल ए सखी मेघ गरजे , चल अब पिया जी का देश है।
ओहिरे देशवा में जगमग जोती गुरुजी दिहले उपदेश हे ॥
गगन गोफा में एगो सुन्दर मूरत देखत लागेला परमेश हे।
रूप अनूप छबि बरनि ना जाला जनु कोटिन उगेला दिनेश हे ॥
उगेला धाम ताहाँ आठो पहरा माया मोह फाटेला कुहेश हे ॥
चारु ओर हीरा लाल के बाती हल हल बरेला हमेश हे।
उठेला गगन घन घोर महाधुनि अमृत भरेला जलेश हे ॥
लक्ष्मी सखी के सुन्दर पियावा सुनी लेहु पिया के सनेश हे।
मानुष जनम के चुकल पियावा फेरु नाही लगिहे उदेश हे।

लक्ष्मी सखी विरचित दूसरी पुस्तक का नाम अमर कहानी है जो वास्तव में अमर है। यदि इसमें लिखित सभी पदों को पढ़ कर समझ लिया जाए और अपने जीवन में पालन किया जाए तो शारीरिक रूप से तो नहीं परंतु मानसिक रूप से आदमी अवश्य अमर बन जाएगा। इस पुस्तक के भी सारे पद संगीत के किसी न किसी राग पर आधारित है। इसमें जो सबसे प्रसिद्ध राग है , वह है , विनय विहाग , राग गारी , झुमरा , हुमरा , बाल लीला , ठुमरी , भैरवी , लवणी , पूर्वी , खरा लए, खेमटा , सवैया , निर्गुण , ध्रुपद , कजली , ककहरा , होरी और चैता।

निम्नलिखित पद ' विनय विहाग ' पर आधारित है:

हे हमारे प्रभु हरन सकल भव त्रासा
कबहूं एको पलक जनी बिसरो रहे जबलेक सोवासा ॥ 1 ॥
काहे दु आज उगत नहीं चंदा चातक मरत पियासा।
बहुतेक धावत केहु केहु पावत तेजि मेजि सकल दुरासा ॥ 2 ॥
केहु केहु पावत नीजु घर बासा, निगुरा जात निरासा
जे हरख मगन में कुकुर जैसे, चाखत हाड़ वो मासा ॥ 3 ॥
चलु सखी अगते से होखंहु दासा, नाहीं त पड़े के परी फांसा।
अबकी जम्हू से जीती लेहु पासा, चलु बसु गगन अकासा ॥ 4॥
लछिमी सखिआ टुटेला सोवांसा, अचरज मति करू आसा।
नाहित नाहक होखेला बिनासा, सुंदर मानुष तन खासा ॥ 5॥

*शेष अगले अंक में...

भोजपुरी विशेष

दिल के हमरा झरोखा पर

दिल के हमरा झरोखा पर
तू पूर्णिमा के चांद बन
कऽ जालू अंजोर अतना
होस खो बइठेला पागल मन

नेह बन के तू बरसेलू प्रित के आकाश से
बान्हेलू तू डोर कोर में आस आ बिस्वास से

छुवेलू तऽ सिहरेनी हम
पुरवइया जस सनन सनन
कऽ जालू अंजोर अतना...

सइतल तोहरा याद से कुछ वक्त निकलले बानीं
सटले बानी हिया में ओके आँखिन में सजले बानीं

बंद करीलें अंखिया तऽ
पायल जस बाजेलू छनन छनन
दिल के हमरा...

- सोनु किशोर

कहीं हम इन्हें भुल ना जाए

गीत

ए मकई, तोहार गुन गुथबअ माला।
भात से तरत भव, लावत गरीब लव;
पूरा - पूरा पानी दिआला। ए मकई...
सातू - मिरचाई - नून, खइला से सुखेला खून;
साधु लेखा रूप बनि जाला। ए मकई...
भूंजा भर झोरी - झोरी, जहां - तहां खोरी - खोरी;
खात बाड़न बाल - गोपाला । ए मकई...
धन ह धनहरा ढाठा, खात लगहर - नाठा;
लेंढा घोनसारी में झोंकला। ए मकई...
दारा - गूर - दहि सान, कृष्ण कही - कही;
मुंहवां में माजा बुझाला। ए मकई...
भुट्टा भगवान विमान खास आई जात;
मन बैकुंठ चलि जाला। ए मकई...
करत ' भिखारी ' खेला, जइहन मलेछू मेला;
गंगा तीरे बहुते बोआला। ए मकई...

रचना – भिखारी ठाकुर

साहित्य मासिक

घनश्याम

श्याम से सावन तक...

वर्ष : 02 , अंक : 11, दिसंबर – जनवरी 2025

मूल्य : 20 रुपए

ई – पत्रिका उपलब्ध है : www.rachnakosh.in

क्या टूटा है शीशे सा दिल में, चेहरा क्यों मुरझाया है
धूप में अकेले रोने वालों, कौन तुम्हें याद आया है...

- प्रेम शंकर

एक बात हमें बता न मां

अच्छा चलो छोड़ो दुनिया की बातें
एक बात हमें बता न मां
कितनी खुश हैं, तु अपने आँगन में
यथार्थ हमें समझा न माँ
तेरे भी तो कुछ सपनें होगें
तेरे भी तो अपने होंगे
उन सपनों बिन, उन अपनों बिन
कैसे जीना सीखा माँ
चार दिवारी में खो दी खुद को
तुने खुद को कितना जाना माँ
अपनी पसन्द की तु सब्जी भी नहीं बनाती
तुने खुद को कितना समझाया
ये बात हमें बता न मां
दो दशको से देखा तुझको
सबसे पहले तेरा जगना
चूल्हा चौका करते करते
तेरे जीवन का ढलना
सबके सपनें तु सजाती
भुल गई खुद का सजना
बता न मां, तेरी पहचान है क्या
बबूआ के अम्मा, छोटकी बहुरिया,
फलना की मेहरिया बता न मां,
अब तेरा नाम हैं, क्या ?
बता न मां अब तेरा नाम हैं, क्या ?

- रानी साह

वीरांगना

हां मैं जानती हूं इश्क तुम्हारी थी
इस धरा से, वसुंधरा, धरित्री से।
प्यार तुम्हें था सिर्फ मां भारती से ।।

पर हमारे प्रति भी तो कुछ जिम्मेदारी थी।
अकेला छोड़ गए हमें वादा पूरा भी ना किया,
ये आदत तो नहीं तुम्हारी थी ।।
चलो मान बेइंतहा इश्क की निशानी है शहादत
मगर उनकी भी न सोची, जो तुम्हारे लिए करते थे इबादत।

तुम कहते हो गर्व करूं तुम्हारे शहादत पे
बताओ, कैसे ना बहाऊ आंसू तुम्हारे शहादत पे।

हां हमें गर्व है, मगर उसका क्या जो खालीपन आ गई है
हमारे जीवन में, सदा के लिए तुम्हारे बदौलत।
अब बताओ ना क्या करूं उसे वर्दी का
जिसके शान पर तुम मरते थे।

बताओ ना क्या करूं उसे तिरंगे का जो थम गए
मेरे हाथों में, जिसके आने के खातिर तुम जीते थे।

समझ नहीं आता कैसे जियु मैं तुम्हारे बिन,
कैसे पग बढ़ाऊं आगे।

एक तुम ही तो थे सहारा मेरे
इस भूमि पर सबसे न्यारा मेरे।

अच्छा होता अगर मुझे भी अपने साथ लिए चलते
तुम वीर होते तो मैं 'वीरांगना' होती।
और वहां तो हम एक साथ जीते ।।

- प्रेम शंकर

प्रधान संपादक : अभिनंदन द्विवेदी | सहायक संपादक : अभिनंदन पाण्डेय, अलबेला, चित्रांश श्रीवास्तव, | संपादक मंडल : शुभम सोनी, कुश श्रीवास्तव, अंकित शर्मा | संपादकीय कार्यालय : पिठौरी, बनियापुर, सारण – 841301, बिहार | अपनी रचना हमें भेजे : rachnakosh.editor@gmail.com